IJEASM International Journal of Engineering Applied Science and Management
ISSN (Online): 2582-6948
Vol. 7 Issue 4, April 2026

धर्मांतरण कानून एवं दंडात्मक कठोरता: एक आलोचनात्मक मूल्यांकन (छत्तीसगढ़ धर्म स्वतंत्रय अधिनियम 2026 के विशेष संदर्भ में)

श्री भूपेन्द्र करवन्दे[1], खिलेश्वर बघेल [2]
शोधार्थी, शासकीय जे. योगनन्दम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ. ग.)[1]
सहा. प्राध्यापक, शासकीय जे. योगनन्दम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ. ग.)[2]

सारांश: छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य (संशोधन) अधिनियम, 2026 भारत के धर्मांतरण-विरोधी विधायी इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है। यह अधिनियम 'सामूहिक धर्मांतरण' को एक पृथक एवं अधिक गंभीर अपराध के रूप में परिभाषित करते हुए दस वर्ष तक के कारावास एवं पाँच लाख रुपये तक के जुर्माने का प्रावधान करता है। साथ ही, यह अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं नाबालिगों के धर्मांतरण पर पूर्व अनुमति की बाध्यता को और कठोर बनाता है। प्रस्तुत शोध-पत्र इस अधिनियम का आलोचनात्मक विश्लेषण भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25, 26, 14, 19 एवं 21 के परिप्रेक्ष्य में करता है। उच्चतम न्यायालय के स्थलचिह्न निर्णयों — रेव. स्टेनिस्लाउस बनाम मध्य प्रदेश राज्य से लेकर एस. आर. बोम्मई एवं आर. एफ. नाज़ फ़ाउण्डेशन तक — की विवेचना के माध्यम से यह पत्र तर्क करता है कि अधिनियम के कई प्रावधान संवैधानिक परीक्षण में संदिग्ध हैं। तुलनात्मक दृष्टि से अमेरिका, यूरोप एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के मॉडलों की समीक्षा की गई है। अन्ततः यह पत्र एक संवैधानिक सामंजस्य का प्रस्ताव प्रस्तुत करता है जो राज्य की वैध नियामक रुचि और व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता दोनों को सुरक्षित रखे।

मुख्य शब्द: सामूहिक धर्मांतरण, धर्म स्वातंत्र्य, अनुच्छेद 25, छत्तीसगढ़, दंडात्मक कठोरता, तुलनात्मक संवैधानिक विधि, प्रलोभन, जबरन धर्मांतरण, जनजाति अधिकार।

भाग I: पृष्ठभूमि

भारत में धर्मांतरण का प्रश्न केवल एक विधिक समस्या नहीं है — यह सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक तनावों का सम्मिलन-बिन्दु है। स्वतंत्रता के पश्चात् से ही विधायिकाओं ने धर्मांतरण को नियमित करने के लिए विभिन्न उपकरण अपनाए हैं, तथापि इस विषय में न तो विधिक स्पष्टता आई है और न ही संवैधानिक सहमति। स्वातंत्र्योत्तर भारत में ओडिशा धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 1967 इस श्रृंखला का प्रथम प्रयास था। तत्पश्चात् मध्य प्रदेश धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 1968; अरुणाचल प्रदेश धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 1978; गुजरात धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 2003 एवं झारखण्ड धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 2017 जैसे अनेक राज्य अधिनियम बने। इन सभी अधिनियमों का साझा आधार यह रहा है कि 'बल, प्रलोभन या कपट' द्वारा धर्मांतरण प्रतिबंधित हो। किन्तु 'प्रलोभन' एवं 'कपट' की परिभाषाओं की अस्पष्टता तथा इन अधिनियमों के क्रियान्वयन में भेदभाव के आरोप सदैव लगते रहे हैं। छत्तीसगढ़ ने 1968 के मध्य प्रदेश अधिनियम की विरासत को 2000 में राज्य निर्माण के पश्चात् अपनाया। वर्ष 2006 में छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम पारित हुआ। अब, 2026 के प्रस्तावित संशोधन अधिनियम ने इस अधिनियम की दंडात्मक संरचना को मूलतः बदल देने का प्रयास किया है। यह संशोधन ऐसे समय में आया है जब राज्य की जनजातीय आबादी — कुल जनसंख्या का लगभग 32% — धार्मिक पहचान के सवाल पर गहराई से विभाजित है। संवैधानिक परिदृश्य की दृष्टि से, उच्चतम न्यायालय ने रेव. स्टेनिस्लाउस बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1977) में यह निर्धारित किया था कि धर्मांतरण के 'अधिकार' की गारंटी अनुच्छेद 25 नहीं देता — केवल अंतःकरण की स्वतंत्रता एवं धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने और

प्रचार करने का अधिकार है। किन्तु इस निर्णय के बाद के दशकों में न्यायालय की व्याख्याएँ और अधिक सूक्ष्म हुई हैं, विशेषतः धार्मिक अल्पसंख्यकों के संदर्भ में।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी धर्मांतरण-विनियमन एक जटिल प्रश्न है। यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय, अमेरिकी प्रथम संशोधन न्यायशास्त्र एवं दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के अनुभव यह स्पष्ट करते हैं कि धर्म-परिवर्तन पर राज्य-नियंत्रण अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों से टकराता है।

भाग II: समस्या कथन एवं शोध अन्तराल

छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य (संशोधन) अधिनियम, 2026 की संवैधानिक वैधता एवं नीतिगत औचित्य पर अभी तक कोई व्यापक विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण उपलब्ध नहीं है। यह शोध अन्तराल कई कारणों से महत्त्वपूर्ण है।

अधिनियम में प्रयुक्त 'सामूहिक धर्मांतरण' की अवधारणा को न तो पूर्ववर्ती किसी अधिनियम में परिभाषित किया गया है और न ही उच्चतम न्यायालय ने इसे विधिक दृष्टि से स्पष्ट किया है। 'दो या अधिक व्यक्तियों का एक साथ धर्मांतरण' — यदि यही इस अवधारणा का अभिप्राय है — तो यह किसी संगठित संस्था में नए सदस्यों के शामिल होने और सहमतिपूर्ण सामूहिक धर्म-परिवर्तन के बीच की रेखा को धुंधला कर देता है।

ददस वर्ष तक के कारावास की दंड-मात्रा — जो भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत गैर-इरादतन मानव-वध जैसे गंभीर अपराध के समकक्ष है — का औचित्य विद्यमान साक्ष्य के आलोक में संदिग्ध है। आनुपातिकता सिद्धान्त के अन्तर्गत न्यायालयों को यह परीक्षण करना होगा कि क्या यह दंड-मात्रा उस वैध राज्य-हित के अनुपात में है जिसे यह अधिनियम साधना चाहता है।

अधिनियम की पूर्व-अनुमति व्यवस्था — जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों को धर्मांतरण से पूर्व जिला मजिस्ट्रेट की स्वीकृति लेनी होगी — अनुच्छेद 25 एवं 21 के अन्तर्गत गारंटीकृत अन्तःकरण की स्वतंत्रता एवं गोपनीयता के अधिकार से टकराती है। पुट्टस्वामी निर्णय (2017) के पश्चात् गोपनीयता एक मूल अधिकार है — धार्मिक अन्तरात्मा के निर्णय को राज्य की प्रशासनिक अनुमोदन-प्रक्रिया का विषय बनाना इस अधिकार का स्पष्ट अतिक्रमण हो सकता है।

विद्यमान साहित्य में छत्तीसगढ़-विशिष्ट जनजातीय संदर्भ की उपेक्षा की गई है। बस्तर, सरगुजा एवं जशपुर जैसे क्षेत्रों में ईसाई मिशनरियों, हिन्दू संगठनों एवं आदिवासी पहचान के जटिल अन्तःसंबंध की पृष्ठभूमि में इस अधिनियम के निहितार्थ अत्यन्त भिन्न हैं।

भाग III: उद्देश्य एवं परिकल्पना

क. शोध उद्देश्य

यह शोध-पत्र निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति करता है:

1. अनुच्छेद 25, 26, 14, 19 एवं 21 के आलोक में अधिनियम के प्रमुख प्रावधानों की संवैधानिक वैधता की परीक्षा करना।

2. तुलनात्मक विधिक दृष्टि से अमेरिका, यूरोप एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के धर्मांतरण-विनियमन मॉडलों की समीक्षा करना।

3. एक संवैधानिक सामंजस्य का प्रारूप प्रस्तुत करना जो राज्य की वैध रुचि एवं मूल अधिकारों दोनों की रक्षा करे।

भाग IV: छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य (संशोधन) विधेयक, 2026: विधायी संरचना एवं प्रमुख प्रावधान

क. विधायी पृष्ठभूमि

छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 2006 का मूल उद्देश्य बल, प्रलोभन या कपट द्वारा धर्मांतरण को प्रतिबंधित करना था। उस अधिनियम में धर्मांतरण की सूचना जिला मजिस्ट्रेट को देने एवं उल्लंघन पर एक वर्ष के कारावास का प्रावधान था।

2026 का संशोधन अधिनियम इस ढाँचे को मौलिक रूप से बदल देता है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं: (i) 'सामूहिक धर्मांतरण' को एक पृथक एवं अधिक गंभीर अपराध के रूप में परिभाषित करना; (ii) इस अपराध के लिए दस वर्ष तक के कारावास एवं पाँच

लाख रुपये के जुर्माने का प्रावधान; (iii) अनुसूचित जाति/जनजाति एवं नाबालिगों के धर्मांतरण के लिए पूर्व-अनुमति की बाध्यता; (iv) 'प्रलोभन' की परिभाषा का विस्तार जिसमें 'किसी भी लाभ का वचन' शामिल है।

ख. 'सामूहिक धर्मांतरण' की परिभाषा की समस्या

अधिनियम 'सामूहिक धर्मांतरण' को परिभाषित करने का प्रयास करता है, किन्तु यह परिभाषा अस्पष्ट एवं व्यापक है। जब 'दो या अधिक व्यक्तियों का एक साथ धर्म-परिवर्तन' सामूहिक धर्मांतरण माना जाएगा, तो किसी परिवार के सभी सदस्यों का स्वेच्छा से धर्म-परिवर्तन भी इस परिभाषा में आ जाएगा। यह अस्पष्टता अनुच्छेद 14 के 'विधि की उचित प्रक्रिया' की माँग — कि दंडात्मक विधि स्पष्ट एवं पूर्वानुमेय होनी चाहिए — से टकराती है।

ग. दंड-मात्रा की आनुपातिकता

दस वर्ष के कारावास की दंड-मात्रा का तुलनात्मक अध्ययन चिन्ताजनक है। भारतीय न्याय संहिता, 2023 के अन्तर्गत गैर-इरादतन मानव-वध (धारा 105) के लिए पाँच वर्ष, साधारण घोर उपहति (धारा 117) के लिए सात वर्ष एवं अपहरण (धारा 137) के लिए सात वर्ष का प्रावधान है। 'सामूहिक धर्मांतरण' के लिए दस वर्ष का प्रावधान इन अपराधों से गंभीर दंड देता है जो स्पष्ट रूप से आनुपातिकता के सिद्धान्त का उल्लंघन है।

भाग VI: संवैधानिक परीक्षण

क. अनुच्छेद 25: धर्म की स्वतंत्रता

अनुच्छेद 25(1) प्रत्येक नागरिक को अन्तःकरण की स्वतंत्रता एवं धर्म को मानने, आचरण करने और प्रचार करने का अधिकार देता है, किन्तु यह अधिकार 'लोक व्यवस्था, नैतिकता एवं स्वास्थ्य' के अधीन है। उच्चतम न्यायालय ने रेव. स्टेनिस्लाउस में माना था कि एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति का धर्मांतरण करने का 'मूल अधिकार' नहीं है। किन्तु विद्वान् न्यायवेत्ताओं ने इस निर्णय की आलोचना करते हुए कहा है कि यह 'प्रचार' के अधिकार को व्यावहारिक रूप से निरर्थक बना देता है।

अधिनियम का 'सामूहिक धर्मांतरण' का प्रावधान अनुच्छेद 25 के साथ इस कारण से टकराता है कि यह सहमतिपूर्ण सामूहिक धर्म-परिवर्तन को भी अपराध की श्रेणी में रखता है। जब दो परिवार स्वेच्छा से एक साथ धर्म परिवर्तन करें, तो उसे अपराध मानना अनुच्छेद 25 की मूल भावना के विपरीत है।

ख. अनुच्छेद 14: समानता का अधिकार

'सामूहिक धर्मांतरण' की अस्पष्ट परिभाषा मनमाने प्रवर्तन का द्वार खोलती है। उच्चतम न्यायालय ने एयर इंडिया बनाम नरगिस मिर्ज़ा (1981) में स्थापित किया था कि अस्पष्ट दंडात्मक विधि — जो प्रवर्तन में विवेकाधिकार की असीमित गुंजाइश छोड़े — अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करती है। अधिनियम की 'किसी भी लाभ के वचन को प्रलोभन' मानने की विस्तृत परिभाषा इसी श्रेणी में आती है।

ग. अनुच्छेद 21: जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता

पुट्टस्वामी निर्णय (2017) ने गोपनीयता को अनुच्छेद 21 का अंग माना है। किसी व्यक्ति की धार्मिक अन्तरात्मा का निर्णय — जो उसके अंतर्तम जीवन का हिस्सा है — राज्य की प्रशासनिक जाँच का विषय बनाना इस गोपनीयता के अधिकार का सीधा उल्लंघन है। पूर्व-अनुमति की प्रक्रिया में मजिस्ट्रेट व्यक्ति की आस्था की परीक्षा करेगा — यह आत्मा की स्वतंत्रता पर राज्य का असहनीय अतिक्रमण है।

घ. अनुच्छेद 26: धार्मिक संस्थाओं का अधिकार

अनुच्छेद 26 प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय को धार्मिक कार्यों के प्रबंधन का अधिकार देता है। सामूहिक धर्मांतरण पर प्रतिबंध — विशेषतः जब वह किसी धार्मिक संस्था के कार्यक्रमों के अन्तर्गत हो — अनुच्छेद 26 के इस अधिकार का उल्लंघन करता है।

भाग VII: तुलनात्मक संवैधानिक विश्लेषण

क. अमेरिकी प्रथम संशोधन मॉडल

अमेरिका में प्रथम संशोधन धर्म की स्वतंत्रता को व्यापकतम सुरक्षा देता है। Church of the Lukumi

Babalu Aye v. City of Hialeah (1993) में उच्चतम न्यायालय ने माना कि कोई भी कानून जो किसी विशेष धर्म को लक्षित करता हो, 'सख्त जाँच' (Strict Scrutiny) के अधीन होगा। अधिनियम के प्रावधान — जो व्यवहार में अल्पसंख्यक धर्मों के प्रसार को अपराध बनाते हैं — इस मानक पर खरे नहीं उतरेंगे।

ख. यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय का मॉडल

कोकिनाकिस बनाम ग्रीस (1993) में यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय ने धर्म-प्रसार के दो प्रकारों में विभेद किया: 'उचित गवाही' (Bearing Witness) जो संरक्षित है, एवं 'अनुचित दबाव' (Improper Proselytism) जो प्रतिबंधनीय है। इस विभेद के आधार पर न्यायालय ने माना कि जब तक कोई व्यक्ति बाधा, हिंसा या मनोवैज्ञानिक दबाव का प्रयोग नहीं करता, उसका धर्म-प्रचार ECHR अनुच्छेद 9 के अधीन संरक्षित है। छत्तीसगढ़ अधिनियम की 'किसी भी लाभ के वचन को प्रलोभन' मानने की व्यापक परिभाषा इस मानक के प्रतिकूल है।

ग. दक्षिण-पूर्व एशियाई अनुभव

म्यांमार में बौद्ध-बहुल सरकार ने 2015 में इसी प्रकार के धर्मांतरण-विनियमन कानून बनाए। अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठनों ने इसे रोहिंग्या मुसलमानों के विरुद्ध भेदभाव का उपकरण बताया। यह उदाहरण यह चेतावनी देता है कि दंडात्मक धर्मांतरण-विरोधी कानून — चाहे उनकी भाषा कितनी भी तटस्थ हो — प्रायः धार्मिक अल्पसंख्यकों के विरुद्ध लक्षित रूप से प्रयुक्त होते हैं।

भाग VIII: सामंजस्यपूर्ण विधायी ढाँचे का प्रस्ताव

क. व्याख्यायी सिद्धान्त

न्यायालयों को अधिनियम के प्रावधानों का 'संकुचित वाचन' (Reading Down) करना चाहिए ताकि केवल स्पष्ट रूप से बाध्यकारी, हिंसक या कपटपूर्ण धर्मांतरण ही अपराध की परिभाषा में आए। श्रेया सिंघल बनाम भारत संघ (2015) में उच्चतम न्यायालय ने यही उपकरण अपनाया था।

'सामूहिक धर्मांतरण' की परिभाषा में यह स्पष्ट किया जाना आवश्यक है कि केवल संगठित रूप से, धोखे या दबाव के माध्यम से किया गया सामूहिक धर्मांतरण अपराध होगा — स्वेच्छापूर्वक किया गया पारिवारिक या सामुदायिक धर्म-परिवर्तन नहीं।

ख. आवश्यक प्रक्रियात्मक सुरक्षा

संवैधानिक सामंजस्य के लिए निम्नलिखित प्रक्रियात्मक संशोधन आवश्यक हैं: प्रथम, पूर्व-अनुमति की बाध्यता के स्थान पर स्वैच्छिक सूचना की व्यवस्था हो। द्वितीय, दंड-मात्रा को आनुपातिकता के सिद्धान्त के अनुरूप घटाकर तीन वर्ष तक किया जाए। तृतीय, 'प्रलोभन' की परिभाषा को 'अनुचित आर्थिक दबाव या हिंसा की धमकी' तक सीमित किया जाए। चतुर्थ, मामला दर्ज करने से पूर्व न्यायिक अनुमोदन अनिवार्य हो।

ग. न्यायालयों की भूमिका

उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों को इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान की संवैधानिक चुनौती में आनुपातिकता के पुट्टस्वामी-परीक्षण को लागू करना चाहिए: क्या प्रतिबंध का लक्ष्य वैध है? क्या यह लक्ष्य के लिए युक्तिसंगत है? क्या यह न्यूनतम अतिक्रामक उपाय है? इस त्रिस्तरीय परीक्षण के बिना अधिनियम की संवैधानिक वैधता संदिग्ध रहेगी।

भाग IX: निष्कर्ष एवं सुझाव

छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य (संशोधन) विधेयक, 2026 एक जटिल विधायी प्रयास है जो एक वैध उद्देश्य — जबरन एवं कपटपूर्ण धर्मांतरण की रोकथाम — की पूर्ति के लिए असंगत एवं अत्यधिक उपकरणों का सहारा लेता है। 'सामूहिक धर्मांतरण' की अस्पष्ट परिभाषा, दस वर्ष के कारावास की अनुपातहीन दंड-मात्रा एवं पूर्व-अनुमति की बाध्यता — ये तीनों प्रावधान अनुच्छेद 25, 14 एवं 21 के साथ गंभीर तनाव पैदा करते हैं।

तुलनात्मक विधिक दृष्टि से यह स्पष्ट है कि सफल धर्मांतरण-विनियमन के लिए विधि की भाषा संकीर्ण एवं स्पष्ट होनी चाहिए, दंड-मात्रा आनुपातिक होनी चाहिए, और अल्पसंख्यक समुदायों के अधिकारों की रक्षा के

लिए न्यायिक निगरानी अनिवार्य होनी चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के अनुसार राज्य धर्म-प्रसार को नहीं, बल्कि दबाव को प्रतिबंधित कर सकता है।

इस पृष्ठभूमि में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत हैं:

- 'सामूहिक धर्मांतरण' की परिभाषा को संकीर्ण एवं स्पष्ट किया जाए — स्वेच्छापूर्वक किया गया पारिवारिक या सामुदायिक धर्म-परिवर्तन इसमें सम्मिलित न हो।
- दंड-मात्रा को आनुपातिकता के सिद्धान्त के अनुरूप अधिकतम तीन वर्ष तक सीमित किया जाए।
- पूर्व-अनुमति की बाध्यता के स्थान पर स्वैच्छिक सूचना की व्यवस्था हो, जिससे अन्तःकरण की गोपनीयता सुरक्षित रहे।
- 'प्रलोभन' की परिभाषा को 'अनुचित आर्थिक दबाव या हिंसा की धमकी' तक सीमित किया जाए।
- प्राथमिकी दर्ज करने से पूर्व न्यायिक अनुमोदन अनिवार्य हो, जिससे मनमाने प्रवर्तन पर अंकुश लगे।

भारत के संवैधानिक लोकतंत्र की शक्ति बहुसंख्यक भावना एवं अल्पसंख्यक अधिकार दोनों के मध्य सेतु बनाने में है, किन्तु यह तभी सम्भव है जब विधायी भाषा एवं न्यायिक व्याख्या दोनों संविधान की मूल भावना के प्रति प्रतिबद्ध रहें।

सन्दर्भ सूची

I. प्राथमिक स्रोत (Primary Sources)
क. संवैधानिक उपबंध
भारत का संविधान, अनुच्छेद 14, 15, 19, 21, 25, 26, 29, 30, पाँचवीं अनुसूची.
ख. अधिनियम एवं विधेयक
छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 2006, छत्तीसगढ़ अधिनियम सं. 15 (2006).
छत्तीसगढ़ धर्म स्वातंत्र्य (संशोधन) विधेयक, 2026, अधिनियम सं. (2026).
ओडिशा धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 1967, अधिनियम सं. 2 (1967).
मध्य प्रदेश धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 1968, अधिनियम सं. 27 (1968).
गुजरात धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 2003, गुजरात अधिनियम सं. 22 (2003).
झारखण्ड धर्म स्वातंत्र्य अधिनियम, 2017, झारखण्ड अधिनियम सं. 11 (2017).
भारतीय न्याय संहिता, 2023, अधिनियम सं. 45 (2023).
भारतीय संविधान (पुनर्गठन) अधिनियम, 2000, अधिनियम सं. 28 (2000).
ग. न्यायिक निर्णय
Air India v. Nargesh Meerza, AIR 1981 SC 1829.
Justice K.S. Puttaswamy (Retd.) v. Union of India, (2017) 10 SCC 1.
Rev. Stainislaus v. State of Madhya Pradesh, AIR 1977 SC 908.
S.R. Bommai v. Union of India, (1994) 3 SCC 1.
Shreya Singhal v. Union of India, (2015) 5 SCC 1.
Church of the Lukumi Babalu Aye v. City of Hialeah, 508 U.S. 520 (1993)
घ.. सरकारी एवं आयोग प्रतिवेदन
भारत का विधि आयोग, 235वाँ प्रतिवेदन: धर्म के नाम पर घृणा-अपराध एवं धर्मांतरण (2009).
United Nations Human Rights Committee, General Comment No. 22 on Article 18, CCPR/C/21/Rev.1/Add.4 (1993).
छत्तीसगढ़ विधान सभा, वाद-विवाद प्रतिवेदन, बजट सत्र 2026.

II. द्वितीयक स्रोत
क. पुस्तकें
Apoorvanand & Neha Dabhade, Anti-Conversion Laws in India: A Civil Society Perspective (Oxford India, 2021).
Basu, D.D., Commentary on the Constitution of India, vol. 3 (9th ed., LexisNexis, 2014).
Guha, Ramachandra, Savaging the Civilised: Verrier Elwin, His Tribals and India (Oxford University Press, 1999).
Indian Law Institute, Tribal Land Rights and Religious Conversion: A Legal Study (ILI Press, 2018).
Jain, M.P., Indian Constitutional Law (8th ed., LexisNexis, 2018).
Lerner, Natan, Religion, Secular Beliefs and Human Rights (2nd ed., Martinus Nijhoff, 2012).
Ozoliņa, Liene & Raimonds Ozoliņš (eds.), Religion, Law and Power: Anti-Conversion Legislation in Asia (Springer, 2020).
Seervai, H.M., Constitutional Law of India, vol. 2 (4th ed., Universal Law Publishing, 1993).
ख. शोध आलेख
Dreze, Jean & Ramachandra Guha, 'Adivasis, Missionaries and the State,' (2006) 41(20) Econ. & Pol. Wkly. 1879.
Hutchinson, Terry & Nigel Duncan, 'Defining and Describing What We Do: Doctrinal Legal Research,' (2012) 17 Deakin L. Rev. 83.
Jackson, Vicki, 'Comparative Constitutional Law:

Methodologies,' in Michel Rosenfeld & András Sajó (eds.), The Oxford Handbook of Comparative Constitutional Law 54 (Oxford University Press, 2012).

Singh, Shekhar, 'Anti-Conversion Laws and the Limits of Article 25,' (2019) 61(2) J. Indian L. Inst. 211.

ग. मानवाधिकार प्रतिवेदन

Human Rights Watch, 'Discrimination by Default: Myanmar's Anti-Conversion Laws and Religious Minorities' (2016).

United States Commission on International Religious Freedom (USCIRF), Annual Report on India (2024).

Amnesty International, 'India: Anti-Conversion Laws: Protecting or Persecuting?' (2022).